# घड़ीसाज

कौन सा... कौन सा समय होता है घड़ीसाज का। उसने चश्मे के अंदर अपनी कंजी और मिरमिरी सी आँखों से घूरते हुए दार्शनिक अंदाज में सीधे मेरी ओर उछाला था यह सवाल।

मैं कतई तैयार नहीं था ऐसे किसी सवाल के लिए। मैं औचक खड़ा रह गया उसकी उलझी हुई मूँछ और सफेद दाढ़ी को देखते हुए।

यंगमैन, मैं तुमसे पूछ रहा हूँ... मुझे इस तरह अन्यमनस्क देखकर हँसा था वह।

जब वह हँसा तो उसकी झुर्रियाँ भी हँसी थी। थुलथुली थरथराती देह भी और उसका वह समय भी। वह हँसी जैसे हवा की तरह थी और भर गई थी हमारे चारों ओर। देर तक वहीं गूँजती रही उसकी हँसी। उस हँसी में मासूमियत थी और सद्यस्नाता की तरह की ताजगी। यकीनन वह हँसी आज के समय की नहीं थी, शायद बरसों पुरानी लेकिन ऐसा कैसे हो सकता है कि कोई बरसों पुरानी ठहरी सी हँसी इतनी ताजी लगे। हो सकता है वह हँसी समय की सीमा रेखाओं को लाँघते हुए आ पहुँची हो यहाँ हमारे समय में। वह हँसी जैसे कहीं किसी गहरे कुएँ से आई थी खनखनाती हुई और अब उसी में लौट गई थी।

मैं हतप्रभ था उस हँसी से। और फिर सुनना चाहता था उसकी निश्छल खनक को धरती पर बिखर जाते हुए। लेकिन अब वह वहाँ नहीं थी। वह लौट चुकी थी उसी कुएँ में, जहाँ से कुछ देर पहले आई होगी। हम उस समय और उस हँसी से लौट रहे थे।

उसके हाथ यंत्रवत घड़ी के अंदरूनी पुर्जों को टटोल रहे थे। उसके दाएँ हाथ में एक छोटा सा स्क्रू ड्राईवर था। उससे वह किसी महीन से पुर्जे को खोलने की कोशिश कर रहा था। कुछ देर कोशिश के बाद भी जब पुर्जा नहीं खुल सका तो उसने अपनी बाईं आँख की पलकों को थोड़ा मिचमिचाते हुए लेंस की टोपी वहाँ चिपका ली। अब उसे पुर्जे बड़े दिखने लगे होंगे। वह जिस पुर्जे को खोलने की कोशिश कर रहा था। आखिर वह खुल ही गया। उसके चेहरे पर सुकून का भाव आया। उसने लेंस की टोपी अपनी आँखों से निकाल कर टेबल पर रख दी।

उसका मोटे लैंस और काली फ्रेम वाला चश्मा नाक तक फिसल आया था। अब वह सीधा मेरी आँखों में झाँक रहा था। जैसे उसे वहाँ किसी पुर्जे के खुलने का इंतजार हो। मैं एक पल के लिए अचकचा गया। सच पूछो तो मैं डर गया था अंदर तक। उसकी सवाल करती मिरमिरी आँखों से या अंदर तक झाँकती उसकी एक्सरे की तरह की

निगाह से। नहीं शायद कुछ और ही था, जिसे मैं फिलहाल साफ-साफ नहीं समझ पा रहा था।

मैं अपनी झेंप मिटाने के लिए ऊपर से सहज होने की अपने तई तमाम कोशिशें कर रहा था लेकिन न जाने क्या था कि सहज होने के बदले और ज्यादा सहम जाता।

उसकी पाँच बाय सात फीट की दुकान में आने से पहले तक सब कुछ ठीक-ठीक था। मैं भी सहज था, बल्कि खुद को बाजार का देवता समझ रहा था। हर तरफ सिर झुकाए आजीजी करते और बड़ी-बड़ी दुकानों में जी सर... यस सर करते लोग। हर कोई मेरे एक इशारे पर बिछ जाने को तैयार था। धन्ना सेठ आओ साब, पधारो साब कर रहे थे।

लेकिन इस कमजोर और थरथराते बूढ़े में न जाने कौन सी हिम्मत थी कि वह अकड़ से खड़ा था और मेरी आँखों में झाँक रहा था। जैसे उसके लिए मेरा कोई मोल ही न था। उसकी इस अकड़ के पीछे कोई ऐसी बात नजर नहीं आती थी। फिर भी वह इतरा रहा था अपने फन पर या अपनी खुद्दारी पर। या शायद वह इसी तरह का रहा होगा पहले से।

पिता गुजर चुके थे करीब बीस साल पहले। पर उनकी घड़ी अब भी वैसे ही समय बताती थी। यह बात अलग थी कि अब मेरे बच्चे उस हाथघड़ी में समय नहीं देखते हैं। उनका समय उनके मोबाइल और लेपटाप में दर्ज हुआ करता है। माँ और मुझे पिता की उस पुरानी हाथघड़ी से बड़ा लगाव है। कभी पिता ने खरीदी थी अपनी पहली कमाई से यह घड़ी। अब माँ के कमरे में वह घड़ी जैसे पिता की मौजूदगी हुआ करती है। उसीकी दुरुस्तगी के लिए मैं शहरभर में घूमता रहा किसी घड़ीसाज की तलाश में। शहर में कहीं घड़ीसाज नहीं थे, फिर किसी ने बताई थी यह जगह। शहर का आखरी घड़ीसाज।

उसकी छोटी सी दुकान की दीवारों पर कई किस्मों की घड़ियाँ टँगी हुई थी। पर सबका समय अलग-अलग था। हर एक के काँटे अलग-अलग दिशाओं में। किसी से किसी का मेल नहीं। उसकी कोई भी घड़ी दस बजकर दस मिनट नहीं बजा रही थी। उनके रंग, आकार और कंपनियाँ भी अलग-अलग थी। बूढ़े की लकड़ी की कुर्सी के ठीक पीछे

पेंडुलम वाली घड़ी लटक रही थी, जो इस दुपहरी में 6 बजा रही थी। उसकी कुर्सी के बाएँ ओर का हत्था नहीं था। शायद टूट चुका होगा कभी। कुर्सी पर कई सारे मैले चिकट कुशन पड़े थे। उसके दो बाय चार के शोकेस में शायद कभी चमचमाती नई घड़ियाँ रखी जाती रही होंगी लेकिन अब वहाँ तडके हुए काँच के पीछे एल्युमिनियम के चोकोर डिब्बों में छोटी-छोटी डिब्बियों में कुछ पुर्जे जमा थे। मुझे लगा कि इन छोटी डिब्बियों में उसने पुर्जे नहीं शायद अपने समय को ही सहेज रखा है। जैसे बच्चे कभी-कभी धूप को डिब्बियों में सहेजने की कोशिश करते हैं। शोकेस के दूसरे हिस्से में कुछ घिस कर बदरंग हो चुकी घड़ियाँ और कुछ चमड़े के पट्टे भी थे।

उसकी टेबल शीशम की पुरानी पड़ चुकी लकड़ी की थी और बहुत भारी भी। टेबल पर औजारों और घड़ियों के पुर्जों की इस तरह घालमेल थी कि कोई उसमें से कुछ नहीं ढूँढ़ सके पर उसके हाथों को पता था कि कौन सी चीज कहाँ रखी है। वह बातें करते हुए या इधर-उधर देखते हुए भी टेबल से सही-सही चीज उठा लिया करता था।

दुकान में अंदर जाने के रास्ते पर ही बची हुई जगह में ग्राहकों के लिए दो मुड्डे रखे हुए थे। उनमें से एक पर मैं बैठा हुआ था। मुड्डे का फोम निकल चुका था और किसी के बैठने पर फोम अंदर की तरफ धँस जाता था। बैठने वाले को लगता कि वह भी धँस गया है। उन पर फर वाले कवर पड़े थे जिन्हें शायद ही कभी झटकारा गया होगा। फर के रेशों में रेत और धूल के बारीक कण उलझे रहते थे।

बाईं ओर की दीवार पर घड़ियों के बीच पुरानी लकड़ी की फ्रेम में एक श्वेत श्याम तस्वीर थी। इसमें कोई युवा दंपत्ति ताजमहल के ठीक सामने मुस्कुरा रहे थे। उन दोनों के बीच कोई पाँच-छह साल की मासूम सी लड़की हँसती हुई खड़ी थी। मैंने कुछ-कुछ मिलाने की कोशिश की तो मुझे लगा कि इस तस्वीर का हीरो शायद यही बूढ़ा है। बगल में खड़ी इसकी पत्नी और वह शायद इसीकी बच्ची रही होगी। उसमें बूढ़ा एकदम चुस्त-दुरुस्त और सजा सँवरा युवा नजर आ रहा था। बड़े हिप्पी कट बाल करीने से कढे हुए, आँखों पर धूप का चश्मा, बड़े-बड़े छपकों की कमीज। उनकी मुस्कुराहटों और बच्ची के खिलखिलाने का समय इसमें ठहर गया था। मैं पूछना चाहता था इस बारे में उससे। पर पूछ नहीं सका। क्या पता मेरे पूछने से वह लौट जाए उस समय में या कि उसका कोई दर्द उभर आए उसके बारे में तफसील से बताते हुए।

हो सकता है वही अकेला रह गया हो पत्नी के जाने के बाद। यह भी कि उस लड़की की शादी हो चुकी हो और उसका पति उससे मारपीट करता हो हर दिन या कि वह किसी के प्रेम में पड़कर चली गई हो बूढ़े की दुनिया से बाहर। या उसका पति उसे भी अपने साथ ले गया हो सात समुंदर पार कहीं।

वह घड़ी के पुर्जों में व्यस्त हुआ तो मेरा डर कुछ कम हुआ। मैंने उसे शिकस्त देने के इरादे से पूछा - तो, आप ही बताइए। कौन सा होता है घड़ीसाज का समय।

वह बहुत देर तक चुप रहा। जैसे उसने कुछ सुना ही नही हो। मुझे लगा कि उसके कान कमजोर हों और उसने वाकई नहीं सुना हो। मैं दुबारा पूछना चाहता था। तभी हँसी वाले गहरे कुएँ से कोई आवाज निकलती सुनाई दी। उसी बूढ़े की आवाज थी पर पहले की तरह नहीं। डूबी-डूबी सी और कहीं दूर से आती हुई। मद्धिम सरसराहट की तरह।

यंगमैन, कहाँ होता है घड़ीसाज का कोई समय। नहीं होता है कोई समय उसका। वह दुनिया के समय को बदलने, ठीक करने और अपनी तरह का समय बताने की एवज में अपना समय भुला देता है। समय बीतने पर क्या बचता है? हम दरवाजे पर चौकसी करते हैं समय की पर कमबख्त वह कब खिड़कियों से गुजर जाता है, पता भी नहीं चलता। समय बदलने से बदलती है दुनिया। कहीं कुछ भी नहीं रह जाता पुराना। पुराने को नेस्तनाबूद करते हुए बढ़ता है समय आगे। वह रुक गया इतना कहकर। जैसे थक गया हो कहते हुए।

फिर कुछ देर बाद जैसे साँसें समेटकर उसने कहा था - अब तो अपनी घड़ियाँ ही नहीं, लोग अपने समय तक को दुरुस्त नहीं करते। उपयोग के बाद फेंक देते हैं सब कुछ।

उसकी आवाज के दर्द को मैंने देर तक अपने सीने में घुलते देखा था। शायद तब से अब तक।

आज बहुत दिनों बाद इधर आना हुआ तो न जाने क्यों वह बूढ़ा याद आ गया। उससे कोई काम नहीं था फिर भी गाड़ी मोड़ दी है उसकी दुकान की ओर।

बाजार अपनी पूरी रंगीनियों में गुलजार है और अपने चित परिचित शोर से भरा हुआ। वहाँ पहले भी किसी ने नहीं सुनी थी उस बूढ़े घड़ीसाज की वह खनकती हँसी और नहीं सुना था वह सवाल भी।

देखता हूँ अब कि वहाँ घड़ीसाज की कोई दुकान नहीं है। पास का चमचमाता शोरूम अब बूढ़े की दुकान में घुसकर और चौड़ा हो गया है। मैं पूछता रहा पर किसी को नहीं मालूम था उसके बारे में। सिवाय हनीफ भाई के।

सामने की पट्टी में सायकिल बेचने वाले हनीफ भाई ने बताया कि एक रात सदमें में वह घड़ीसाज चल बसा। अपनी जवानी के दिनों से थी यहाँ उसकी दुकान। पर कुछ महीनों से इसे लेकर वह तनाव में था। दुकान का मालिक उस पर इसे खाली करने का दबाव बना रहा था। उसने कुछ और दिनों के लिए गुहार की लेकिन किसी ने नहीं सुनी। वह सहता रहा कई दिनों। एक दिन दुकान मालिक ने उसका सामान फेंक दिया सड़क पर। रोते हुए देर तक समेटता रहा वह सड़क पर बिखरा हुआ सामान। निराश हो गया था वह जैसे सामान नहीं उसे ही फेंक दिया था सड़क पर। फिर बेआबरू किसी हाथठेले पर ले गया अपना सामान अपने घर। इस तरह बेदखल होने की रात उसकी आखरी रात हो गई। उसका इस भरी-पूरी दुनिया में कोई नहीं था। उसकी लावारिस देह को ले गया था कोई मरघट तक। न जाने कौन!

मुझे लगा कि उसका समय और उसकी घड़ियाँ भी चली गईं हैं शायद उसके ही साथ। इस वाकिए के बाद भी कुछ महीने और गुजर गए।

https://www.hindiadda.com/ghadisaaj/